पाठ्यक्रम पर राजनैतिक निर्णय

सवाल और सरोकार

गुंजन शर्मा

“किसी भी शैक्षिक निर्णय की क्या प्रक्रिया होनी चाहिए? क्या ये निर्णय महज नौकरशाही के फरमानों के द्वारा किए जा सकते हैं? क्या शोध और व्यापक सलाह-मशविरे को स्थान नहीं मिलना चाहिए? अनेक बार सरकारों द्वारा लिए जाने वाले निर्णय शैक्षिक शोध और स्थापित प्रक्रियाओं की अनदेखी करते हैं। दिल्ली सरकार द्वारा पाठ्यपुस्तकों से पाठ्य-बिन्दुओं को हटाने का निर्णय भी इसी प्रकृति का है। इस लेख में दिल्ली सरकार के द्वारा लिए गए निर्णय की आलोचनात्मक विवेचना पेश करता है।”

हाल ही में दिल्ली सरकार ने यह तय किया है कि वह छठीं से दसवीं कक्षा के पाठ्यक्रम को 25 प्रतिशत घटाएगी। दिल्ली के शिक्षा निदेशालय का यह निर्णय निदेशालय के अंतर्गत आने वाले शहर के 900 से ज़्यादा स्कूलों को प्रभावित करेगा। प्रारंभिक तौर पर पाठ्यक्रम घटाने में शायद कोई समस्या नहीं दिखती हो, खासतौर पर तब जब तर्क यह दिया जा रहा हो कि इससे छात्रों पर पाठ्यक्रम का भार घटेगा तथा ‘व्यावसायिक कौशल एवं कला’ के लिए ‘गुणवत्तापूर्ण समय’ उपलब्ध हो पाएगा। हालांकि बारीकी से देखने पर पता चलता है कि इस निर्णय और प्रक्रिया के कई ऐसे पक्ष हैं जिन पर ठहर कर सोचने की आवश्यकता है। पर पहले जान लें कि यह पूरा मामला है क्या।

पाठ्यक्रम में प्रस्तावित संशोधन

दिल्ली के शिक्षा निदेशालय द्वारा जारी पाठ्यक्रम में 25 प्रतिशत कटौती का एक नोटिस सितंबर 10, 2015 को स्कूल शिक्षकों तक पहुंचा। इस नोटिस में कक्षा छः से दस के विभिन्न विषयों में प्रस्तावित कटौतियों और उनके कारणों की सूची थी, जिस पर शिक्षकों को ‘विस्तारपूर्वक’ विमर्श के आधार पर हर कक्षा के लिए 150 शब्दों के भीतर अपनी टिप्पणी दर्ज करने को कहा गया। इस सूची में हिंदी के 13, अंग्रेजी के 20, गणित के 9, विज्ञान के 19 और समाज विज्ञान के 26 पाठ्य-बिन्दुओं को हटाए जाने का प्रस्ताव था। सूची को देखने पर ऐसा लगता है जैसे यह पाठ्यक्रम में नहीं, बल्कि पाठ्यपुस्तकों में कटौती का प्रस्ताव है। शायद शिक्षा निदेशालय के अधिकारियों की दृष्टि में पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों में कोई ख़ास अंतर नहीं है!

इन कटौतियों के लिए दिए गए तर्क शिक्षा निदेशालय या सरकार की पाठ्यचर्या और विषय-ज्ञान की अवधारणाओं को तो रेखांकित करते ही हैं, साथ ही इनमें निहित बच्चों, बचपन, शिक्षाशास्त्र और शिक्षा के व्यापक उद्देश्यों की समझ की ओर भी इशारा करते हैं। जैसे, सातवीं कक्षा के 'पाठ्यक्रम' से हिंदी की कहानी 'दादी मां' को हटाने का तर्क यह दिया गया है कि कहानी 'बहुत लम्बी और अरुचिकर' है। कविता 'विप्लव गायन' को यह कारण देकर इस सूची में शामिल किया गया है कि इसकी भाषा तो जटिल है ही, यह 'दार्शनिक' भी है और इसीलिए बच्चों की समझ के स्तर से ऊपर है। इसी तरह 'ध्वनि' कविता को हटाने का तर्क है, इसका बच्चों की 'भावनात्मक समझ' के दायरे से बाहर होना। समाज विज्ञान में प्रस्तावित कटौतियों में कक्षा दस के राजनीतिक शास्त्र के दो पाठ 'जन संघर्ष व आंदोलन' और 'लोकतंत्र की चुनौतियां' शामिल हैं। इनमें से पहले को हटाने के लिए दिया गया तर्क है, 'पाठ पढ़ने के बाद छात्र यह समझते हैं कि आंदोलन, अराजकता और सरकार की खिलाफत ही सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने के तरीके हैं। यह लोकतंत्र में सत्य नहीं है। इसलिए इस पाठ को हटाया जाना चाहिए।' दूसरे पाठ को हटाए जाने का कारण यह बताया गया है कि यह 'भ्रामक और त्रुटिपूर्ण' है और 'छात्र और शिक्षक इसके बुनियादी मूल्यों तक नहीं पहुंच पाते।'

इसी तरह गढ़े गए इन 'तर्कों' की सूची से गुज़रते हुए लगता है जैसे शिक्षा का उद्देश्य बच्चों में संकुचित रूप से परिभाषित कुछ 'अकादमिक कौशल' विकसित करना मात्र है और स्कूली पाठ्यक्रम राज्य की 'सत्य और ज्ञान' की अवधारणाओं को स्थापित करने का एक माध्यम भर है। इसलिए इस पूरी प्रक्रिया को शिक्षणशास्त्रीय नज़रिए से देखा जाना ज़रूरी है क्योंकि ऐसे निर्णय लेने में नौकरशाही की जल्दबाज़ी बहुधा इसे नज़रअंदाज कर देती है।

पाठ्यक्रम और शिक्षाशास्त्रीय बारीकियां

पिछले एक दशक के दौरान देश भर में स्कूलों के पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों को राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (एन.सी.ई.आर.टी.) के द्वारा बनाए गए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या (एन.सी.एफ.) 2005 के आधार पर बदला या संशोधित किया गया। एन.सी.एफ. 2005 का आधार 1993 में यशपाल समिति द्वारा प्रस्तुत की गई रिपोर्ट 'शिक्षा बिना बोझ के' रही है। यानी, बच्चों पर शिक्षायी बोझ की समस्या को यह व्यापक तौर पर संबोधित करता है (एन.सी.ई.आर.टी., 2005, पृ. iii)। साथ ही यह विभिन्न कलाओं और कौशलों को शिक्षण के अभिन्न अंग के रूप में रेखांकित करता है। यहां यह पूछना मौजूं होगा कि क्या शिक्षा निदेशालय ने 'कला और कौशल' शिक्षण के लिए पाठ्यक्रम के 'बोझ' को घटाने की इस प्रक्रिया में वर्तमान पाठ्यचर्या और पाठ्यक्रम के निर्माताओं से कोई सलाह-मशविरा किया है?

प्रेस ट्रस्ट ऑफ इंडिया (पी.टी.आई.) की हालिया रिपोर्ट (सितंबर 27, 2015) के मुताबिक दिल्ली सरकार ने अकादमिक जगत की तीखी प्रतिक्रिया के बाद एन.सी.ई.आर.टी. और अन्य संस्थानों के सदस्यों की एक समिति बनाने का निर्णय लिया है जिसे इस पूरी प्रक्रिया की समीक्षा कर अपनी रिपोर्ट एक महीने में देनी होगी। वर्तमान पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों को बनाने में तीन साल से ज्यादा का समय लगा था। इसके लिए 21 उपसमितियों ने केवल पाठ्यचर्या पर काम किया था और इनके आधार पर पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों को बनाया गया। ऐसे में यह सोचना जरूरी है कि पाठ्यचर्या संशोधन या घटाने का यह काम केवल 30 दिनों में कैसे हो सकता है। यहां पर सरकारी और राजनैतिक निर्णय कर लेने के बाद प्रस्तावित 'समीक्षा' नौकरशाही के निर्णय को सही बताने की कोशिश मात्र लगती है। परन्तु ऐसी 'कोशिशों' के जरिए एक व्यवस्थित शिक्षणशास्त्रीय तर्क को गढ़ना काफ़ी मुश्किल होगा।

पाठ्यक्रम के कुछ चुनिंदा बिंदुओं को हटाना या उसमें कुछ जोड़ना एक मशीनी प्रक्रिया नहीं है। सैद्धांतिक रूप से देखें तो पाठ्यचर्या की रूपरेखा पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों से पहले बनाई जाती है। यहां यह सुनिश्चित किया जाता है कि विभिन्न अकादमिक उद्देश्यों में सामंजस्य बना रहे। ऐसा ही एक उद्देश्य है विभिन्न सामाजिक वर्गों और नज़रियों की भागीदारी। एन.सी.एफ. 2005 ने इस सामंजस्य को सुनिश्चित करने के लिए न सिर्फ ख़ासा प्रयास किया बल्कि उसमें गहरी विशेषज्ञता और लम्बा समय लगाया।

पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों को बनाते हुए यह भी सुनिश्चित किया जाता है कि कक्षा विशेष के प्रत्येक विषय का पिछला अध्याय आने वाले अध्यायों को सीखने का आधार बने। किसी मुकम्मल रूपरेखा पर काम किए बगैर अगर पाठ्यक्रम को जहां-तहां से काटा जाए तो यह शिक्षायी उद्देश्यों में एक भटकाव की तरह दिखेगा, जैसा कि प्रस्तावित कांट-छांट और उसके लिए दिए गए तर्कों में दिखता है। कम-से-कम शिक्षा निदेशालय का नोटिस तो यही संप्रेषित करता दिखता है।

समाज-विज्ञान के पाठ्यक्रम में कटौती के लिए 26 पाठ्य-बिन्दुओं की सूची में कम से कम 6 पाठ्य-बिन्दु ऐसे हैं जिनका उद्देश्य भारतीय समाज में हाशियाकरण की प्रक्रिया पर बच्चों में एक आलोचनात्मक सोच विकसित करना है (और कई पाठ्य-बिन्दु भारतीय लोकतंत्र पर एक समीक्षात्मक समझ बनाते हैं)। हाशियाकरण की समझ के साथ समाज विज्ञान का शिक्षण एन.सी.एफ. 2005 की एक मुख्य अनुशंसा थी। शिक्षा निदेशालय का नोटिस इन पाठ्य-बिन्दुओं को 'अस्पष्ट' और 'अबूझ' घोषित करता है। यहां यह पूछना मौजूं लगता है कि किस नजरिए से ये पाठ्य-बिन्दु 'अबूझ' हैं और किसकी दृष्टि से 'स्पष्टता' को परिभाषित किया गया है। इस 'एकांगी' दृष्टिकोण पर रॉय (2015) टिप्पणी करते हुए बताती हैं कि यह संशोधन बच्चों के समक्ष अपने सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश का उसकी जटिलताओं से कटा हुआ एक सरलीकृत गैर-व्यवहारिक चित्रण प्रस्तुत करता है।

गणित और विज्ञान में प्रस्तावित कटौती इन विषयों के शिक्षणशास्त्र में एक अनापेक्षित गड़बड़ी का कारण बन सकती है। इन पाठ्य-बन्दुओं के दोहराव को कटौती के पक्ष में एकमात्र तर्क के रूप में रखा गया है। यहां यह सवाल पूछा जा सकता है कि क्या पाठ्य-बिन्दुओं का दोहराव हमेशा ही अनापेक्षित होता है या यह एक शिक्षणशास्त्रीय ज़रूरत है? इसी तरह की समस्याएं अग्निहोत्री (2015) ने भाषा में प्रस्तावित कटौतियों के संदर्भ में रेखांकित की हैं। ऐसा लगता है कि शिक्षा निदेशालय ने कटौती प्रस्तावित करने से पहले छोटी और बड़ी कक्षाओं की पाठ्य-बिन्दुओं और संबंधित कठिनाई के स्तरों का कोई व्यवस्थित अध्ययन करने का प्रयास नहीं किया।

पाठ्यक्रम की कटौती के मामले में शिक्षा निदेशालय के अधिकारियों ने यह तर्क प्रस्तुत किया है कि काटे गए पाठ्य-बिन्दुओं को 'इस या उस रूप में' ऊंची कक्षाओं में शामिल कर लिया जाएगा (पी.टी.आई., सितम्बर 27, 2015)। लेकिन क्या पाठ्यचर्या संबंधी निर्णय इतने सरलीकृत तरीके से तय किए जा सकते हैं? क्या पाठ्य-बिन्दुओं का यह हेर-फेर बड़ी या छोटी कक्षाओं के बच्चों और शिक्षकों का भार नहीं बढ़ाएगा? क्या यह पाठ्यचर्या के उद्देश्यों और रचना को गहरे तौर से बदल नहीं देगा? किसी गहन विचार और मुकम्मल पाठ्यचर्या की रचना के बगैर यह 'हेर-फेर' न सिर्फ शिक्षणशास्त्रीय असंतुलन को बढ़ाएगा बल्कि इसकी भी आशंका है कि इससे संवैधानिक मूल्यों- लोकतंत्र, समता और सामाजिक न्याय- की अनदेखी होगी। कुल मिलाकर प्रस्तावित कटौती पाठ्यचर्या की गुणवत्ता को प्रभावित करेगी।

पाठ्यक्रमः भार बनाम गुणवत्ता

पाठ्यक्रम को घटाने की इस प्रक्रिया को हम शिक्षा के अधिकार अधिनियम 2009 (आर.टी.ई.) के खण्ड 16 में निहित बच्चों को फेल न करने के प्रावधान पर दिल्ली सरकार के नज़रिए से अलग करके नहीं देख सकते। आर.टी.ई. अधिनियम में यह प्रावधान इसलिए शामिल किया गया था कि बच्चों पर फेल होने के बोझ को कम करके यह सुनिश्चित किया जा सके कि वे अपनी प्रारम्भिक शिक्षा को पूरा कर सकें। दिल्ली सरकार ने इस प्रावधान का यह कहकर ज़ोरदार विरोध किया कि फेल न होने से बच्चे डरते नहीं हैं और इसलिए न तो बच्चे पढ़ते हैं न ही शिक्षक उन्हें पढ़ाते हैं (*इण्डियन एक्सप्रेस*, मार्च 11, 2015)। ऐसा लगता है कि इस स्थिति से निपटने के लिए दिल्ली सरकार ने पाठ्यक्रम के 'बोझ' को घटाने का निर्णय लिया है ताकि बेहतर 'अकादमिक उपलब्धियों' को दिखाया जा सके। लेकिन सवाल यह है कि क्या हम शिक्षायी 'बोझ' को उसकी 'गुणवत्ता' से अलग करके देख सकते हैं?

मीडिया में आई रिपोर्टों को देखें तो पता चलता है कि शिक्षा निदेशालय जिस तरीके से 'कौशल' को परिभाषित करता है वह 3 आर (पढ़ना, लिखना, गणना) की रूढ़िगत समझ तक ही सीमित है। पी.टी.आई. की रिपोर्ट (सितम्बर 27, 2015) में शिक्षा निदेशालय के एक अधिकारी को उद्धृत करते हुए बताया गया है कि यह निर्णय इस सरोकार से जुड़ा है कि दिल्ली के सरकारी स्कूलों के 'आधे छात्र ठीक से पढ़ और लिख भी नहीं सकते। कक्षा छः के छात्र बुनियादी गणित भी नहीं जानते'। ऐसे में इसकी संभावना नहीं लगती कि पाठ्यक्रम कटौती से मिले गुणवत्तापूर्ण समय का इस्तेमाल 'सृजनात्मक कला' और 'पेशेवर हुनर' को सिखाने के लिए होगा। इस समय का 'उपयोग' (जैसा कि पी. टी.आई. की रिपोर्ट बताती है) 'बेसिक स्किल प्रोग्राम' के लिए ही किया जाएगा। इससे यह स्पष्ट है कि इन कार्यक्रमों का ज़ोर संकीर्ण तरीके से परिभाषित किए गए सीखने के उन उद्देश्यों ('आउटकम्स') पर होगा जिसे दिल्ली सरकार के स्कूल पूरा करने में नाकामयाब रहे हैं।

ऐसी स्थिति में इस पर आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि पाठ्यक्रम में यह कटौती सरकारी स्कूलों द्वारा निम्न स्तर की शिक्षा के प्रावधानों की ही एक कड़ी है- क्योंकि इसके जरिए कोई बड़ा शिक्षायी उद्देश्य तो पूरा नहीं हो रहा है परन्तु ऐसा करके सरकार गुणवत्ता के मानकों को कम करके अन्य कटौतियों को जायज़ ठहरा सकती है, जैसे- शिक्षकों की भर्ती में कटौती, शिक्षण समय में कटौती।

एक आशंका यह भी है कि यह परिवर्तन राज्य द्वारा मुहैया कराई जाने वाली शिक्षा और सरकारी स्कूलों से अपेक्षाओं को, जो पहले से ही काफी कम हैं, उन्हें और कम करने का माध्यम भी बन सकता है। इस हेर-फेर में 'पेशेवर हुनर और कला' पर ज़ोर एक अच्छा ख्याल लगता है पर इस बारे में सरकार के पास न तो कोई योजना दिखती है और न ही कोई तैयारी। उदाहरण के लिए, पाठ्यक्रम के इस हिस्से का बाकी हिस्सों में तालमेल कैसे बैठाया जाएगा और इसे पढ़ाने के लिए प्रशिक्षित शिक्षकों की बहाली कैसे की जाएगी- इस विषय पर कोई जानकारी उपलब्ध नहीं है।

शिक्षा के अधिकार अधिनियम 2009 का उल्लंघन

इस मामले में शिक्षणशास्त्रीय मसलों के अलावा प्रक्रियागत पहलुओं पर भी कई सवाल उठते हैं।

शिक्षा के अधिकार अधिनियम 2009 का खण्ड 29 कहता है कि स्कूली पाठ्यचर्या (कक्षा आठ तक) संबंधी कोई भी निर्णय अकादमिक प्राधिकरण ही तय करेगा। दिल्ली सरकार ने राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (एस. सी.ई.आर.टी.) को अकादमिक प्राधिकरण घोषित किया है। तब यह सवाल उठता है कि कक्षा छह से आठ के मामले में पाठ्यक्रम कटौती का यह निर्णय एस.सी.ई.आर.टी. के बजाय शिक्षा निदेशालय क्यों कर रहा है? दरअसल, पाठ्यचर्या में निरन्तरता बनाए रखने के लिए यह तार्किक होगा कि एस.सी.ई.आर.टी. ही कक्षा आठ के बाद के पाठ्यचर्या संबंधी निर्णय करे। सरकार ने इसकी कोई जानकारी नहीं दी है कि एस.सी.ई.आर.टी. ने पाठ्यक्रम कटौती संबंधी कोई आकलन किया है या इसकी पहचान की है कि पाठ्यक्रम से क्या-क्या हटाया जाए। यह अच्छा होता अगर सरकार शिक्षकों से सलाह-मशविरा करने की प्रक्रिया भी एस.सी.ई.आर.टी. (जो कि शिक्षकों के प्रशिक्षण का कार्य करती है) के जरिए करवाती ताकि इस मसले पर सुविचारित और व्यापक नजरिए मिलते और काम एस.सी.ई.आर. टी. के नियमों के तहत होता।

दिल्ली के शिक्षा निदेशालय द्वारा जारी नोटिस को बारीकी से पढ़ें तो यह साफ है कि पाठ्यक्रम कटौती का यह निर्णय पहले से ही ले लिया गया है और इस मामले में किए जाने वाली राय-मशविरा औपचारिकता मात्र है। जैसे इस नोटिस में स्कूल शिक्षकों से यह अपेक्षा की गई कि वे यह बताएं कि किन पाठ्य-बिन्दुओं को हटा दिया जाना चाहिए न कि वे इस पर विचार करें कि 25 प्रतिशत पाठ्यक्रम की कटौती होनी चाहिए या नहीं। सवाल यह है कि यह किसने तय किया कि 25 प्रतिशत पाठ्यक्रम, न कम न ज्यादा, की कटौती ही अपेक्षित है? और फिर शिक्षकों को पाठ्यक्रम कटौती पर 'विस्तारपूर्वक' चर्चा करने, अपने 'मन्तव्य' को लिखने और फार्मेट पूरा करने के लिए केवल छः दिन क्यों दिए गए?

यह कार्य उन्हें अपने नियमित शिक्षण को करते हुए पूरा करना था- और वह भी तब जब इस बात का विश्वास करने का कोई कारण नहीं था कि उनके 'मन्तव्यों' का कोई इस्तेमाल होगा।

अन्ततः यह कहना भी ज़रूरी है कि यह आदेश केवल शिक्षा निदेशालय के अन्तर्गत आने वाले स्कूलों पर लागू होगा। यह दिल्ली के निजी स्कूलों पर लागू नहीं होगा जब तक कि उनका प्रबन्धन यह तय न कर ले। राज्य में चल रहे वे सरकारी स्कूल भी इससे प्रभावित नहीं होंगे जिनका प्रशासन शिक्षा निदेशालय के अन्तर्गत नहीं आता। इस मामले में यह साफ दिखता है कि यह निर्णय सरकारी और निजी स्कूलों के बीच के फासले तो बढ़ाएगा ही साथ ही अलग-अलग तरह के सरकारी स्कूलों के बीच का फासला भी बढ़ाएगा।

शिक्षणशास्त्र पर राजनीति

सरकार और उसे चलाने वाले राजनीतिज्ञों को यह समझना होगा कि पाठ्यक्रम संबंधी किसी भी निर्णय को हम उस संदर्भ से दरकिनार करके नहीं ले सकते जिसके बीच पाठ्यचर्या को शिक्षायी व्यवहार में अपनाया जाता है। यह निर्णय केवल राजनैतिक फरमानों के जरिए नहीं हो सकते हैं। पाठ्यक्रम बदलाव का असर एक पूरी पीढ़ी पर होगा और इसलिए इसे जल्दबाज़ी में नहीं निपटाया जा सकता। दिल्ली सरकार द्वारा शिक्षा का बजट बढ़ाया जाना, जैसा कि सरकार का दावा है, एक सराहनीय कदम है। परन्तु मात्र बजट में बढ़ोतरी से शिक्षायी गुणवत्ता में सुधार नहीं किया जा सकता, जब तक पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों पर सुविचारित और सुनियिजित नीति न अपनाई जाए। ◆

(इस लेख के संपादन में योगदान के लिए मैं मनोज चाहिल का तहेदिल से आभार व्यक्त करती हूं)

नोटः इस लेख का संक्षिप्त रूप अंग्रेजी ऑन लाइन 'द वायर' (28 सितम्बर, 2015) में प्रकाशित हो चुका है। कुछ विस्तार और बदलावों के साथ हिन्दी में यहां प्रकाशित किया जा रहा है।

संदर्भः

एन.सी.ई.आर.टी. (2005), राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005, दिल्लीः एन.सी.ई.आर.टी.।
भारत सरकार (2009), दी राइट ऑफ चिल्ड्रेन टू फ्री एण्ड कम्पल्सरी एजुकेशन एक्ट 2009 दिल्लीः भारत सरकार।
पी.टी.आई. (सितम्बर 27, 2015), सिलेबस रिडक्शनः डिलीटेड कन्टेन्ट टू बी रीयूस्ड।
रॉय, कुमकुम (सितम्बर 16, 2015), ईज़िंग दी बर्डन और डम्बिंग अस डाउन? दी हिन्दू।
अग्निहोत्री, रमाकान्त (सितम्बर 19, 2015). आ.आ.प. गवर्नमेन्ट्स कलैम्प ऑन टेक्स्टबुक कन्टेन्ट्स. डेक्कन हेराल्ड।
इण्डियन एक्सप्रेस (मार्च 11, 2015). देल्ही वॉन्ट्स ऑटोमेटिक प्रोमोशन्स टू एंड इन क्लास 3।

लेखिका परिचय : डॉ. गुंजन, शर्मा स्कूल ऑफ एजुकेशन स्टडीज़, अम्बेडकर विश्वविद्यालय, दिल्ली में असिस्टेंट प्रोफेसर हैं और शिक्षा नीति, करिक्युलम् स्टडीज़, टीचर एजुकेशन और अर्बन एजुकेशन जैसे क्षेत्रों में कार्य करती हैं।